JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

श्रीमद्भगवद्गीता में योग

1 परमार सुचेता

NET YOGA

मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान

6375266058

suchita.c1982@gmail.com

शोध सार :– श्रीमद्भगवद्गीता में 'योग' शब्द का एक नहीं अपितु कई अर्थों में प्रयोग हुआ है लेकिन प्रत्येक अर्थ अन्ततः ईश्वर से मिलने के मार्ग से ही जोड़ता है। गीता में योग के कई प्रकार हैं लेकिन मुख्यतः तीन योग का सम्बन्ध मनुष्य से अधिक होता है यह तीन योग हैं– ज्ञानयोग, भक्तियोग और कर्मयोग। श्रीमद्भगवद्गीता को यदि योग का मुख्य ग्रन्थ कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। योग के आदिवक्ता स्वयं श्रीकृष्ण भगवान है इसलिए उन्हें योगेश्वर भी कहा गया है। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने बताया– मैंनें इस अविनाषी योग का उपदेश सूर्य भगवान को दिया, सूर्य ने अपने पुत्र वैवस्वत मनु से कहा और मनु ने अपने पुत्र राजा इक्ष्वाकु से कहा इस प्रकार योग को ऋषियों ने जाना। (4.1)

संकेताक्षर :– भगवद्गीता, योग, कर्मयोग, ज्ञानयोग।

प्रस्तावना :– श्रीमद्भगवद्गीता हिन्दू धर्म के सबसे महत्वपूर्ण धार्मिक ग्रन्थों में से एक है और आसानी से सबसे अच्छी तरह से जाना जाता है। यह सदियों से लेखकों, कवियों, वैज्ञानिकों, धर्मशास्त्रियों और दार्शनिकों द्वारा उद्धृत किया गया है।

महामुनि भगवान वेदव्यास द्वारा विरचित श्रीमद्भगवद्गीता स्वयं भगवान श्रीकृष्ण द्वारा कथित होने के कारण इसके वक्ता स्वयं भगवान एवं श्रोता के रूप में पार्थ (अर्जुन) है। गीता एक ऐसा ग्रन्थ है जिसके 700 श्लोकों में सम्पूर्ण वेदों का सार निहित है। श्रीकृष्ण ने गीता को अपना हृदय बताते हुए कहा है– **"गीता मे हृदयं पार्थ"**।

योग शब्द 'युज्' धातु में 'घञ्' प्रत्यय लगने से बना है। योग शब्द का अर्थ है सम्यक् प्रकार से भगवान के साथ युक्त हो जाना, मिल जाना। योग का अर्थ है जीव तथा ब्रह्म का मिलन अर्थात् जीवात्मा को परमात्मा के साथ जोड़ना। योग की विभिन्न शाखाएँ राजयोग, लययोग, भक्तियोग, नादयोग आदि है। वेद, उपनिषद्, गीता, दर्शन, पुराणों आदि प्राचीन ग्रन्थों में योग का वर्णन मिलता है।

योग दर्शन के प्रणेता महर्षि पतञ्जलि ने योग की परिभाषा कुछ इस प्रकार दी है– **"योगश्चित्तवृत्ति निरोधः"** अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध करना ही योग है।

व्यासभाष्य में महर्षि व्यास ने कहा है **"योगः समाधिः"** अर्थात् योग समाधि है।

कठोपनिषद् में योग की परिभाषा कुछ इस प्रकार है–

"तां योगमिति मन्यन्ते स्थिरामिन्द्रियधारणाम्।

अप्रमत्तस्तदा भवति योगो हि प्रभवाप्ययौ।।" (2.3.11)

अर्थात् इन्द्रियों की स्थिर धारणा को ही योग कहते हैं।

गीता भारतीय आध्यात्मिक ग्रन्थों में महत्वपूर्ण ग्रन्थ माना जाता है। गीता के सभी अध्याय के नाम योग से जुड़े हैं। गीता की महत्ता इस बात से सिद्ध होती है कि संसार की सर्वाधिक भाषा में गीता का अनुवाद है। गीता में योग के विभिन्न शाखाओं का वर्णन है जैसे कर्मयोग, ज्ञानयोग, राजयोग आदि योग क्या है ? किस स्थान पर योगाभ्यास करना चाहिए ? किस प्रकार योग करना चाहिए ? इन सभी बातों का वर्णन गीता में है, योग करने से प्राप्त फल का वर्णन भी देखने को मिलता है।

योग की परिभाषा देते हुए भगवद्गीता में कहा है–

"योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।

सिद्धसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते।।" (2.48)

अर्थात् हे धनंजय तू आसक्ति को त्यागकर तथा सिद्धि और असिद्धि में समान बुद्धिवाला होकर योग में स्थित हुआ कर्तव्य कर्मों को कर, समत्व ही योग कहलाता है।

"बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते।

तस्माद्योगााय युज्यस्व योगः कर्मसु कौषलम्।।" (2.49)

अर्थात् समबुद्धियुक्त पुरुष पुण्य और पाप दोनों को इसी लोक में त्याग देता है अर्थात् उनसे मुक्त हो जाता है। इससे तू समत्वरूप योग में लग जा; यह समत्वरूप योग ही कर्मों में कुशलता है अर्थात् कर्मबन्धन से छूटने का उपाय है।

"तं विद्याद् दुःखसंयोगवियोगं योगसञ्ज्ञितम्।

स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा।।" (6.23)

अर्थात् जो दुःखरूप संसार के संयोग से रहित है तथा जिसका नाम संयोग है; जिसका नाम योग है; उसको जानना चाहिये। वह योग न उकताये हुए अर्थात् धैर्य और उत्साह युक्त चित्त से निश्चयपूर्वक करना कर्तव्य है।

योग के लिए उचित भूमि एवं शारीरिक स्थिति का वर्णन–

षुद्ध भूमि में, जिसके ऊपर क्रमशः कुषा, मृगछाला और वस्त्र बिछे हैं, जो न बहुत ऊँचा है और न बहुत नीचा, ऐसे अपने आसन को स्थिर स्थापन करके उस आसन पर बैठकर चित्त और इन्द्रियों की क्रियाओं को वश में रखते हुए मन को एकाग्र करके अन्तःकरण की शुद्धि के लिए योग का अभ्यास करे। काया, सिर और गले को समान एवं अचल धारण करके और स्थिर होकर, अपनी नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि जमाकर, अन्य दिशाओं को ना देखता हुआ– ब्रह्मचारी के व्रत में स्थित, भयरहित तथा भलीभाँति षान्त अन्तःकरण सावधान योगी मन को रोककर मुझमें चित्त वाला और मेरे परायण होकर स्थित होवे। (6.11–14)

"युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।

युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।।" (6.17)

अर्थात् दुःखों का करने वाला योग तो यथायोग्य आहार–विहार करने वाले का, कर्मों में यथायोग्य चेष्टा करने वाले का और यथायोग्य सोने तथा जागने वाले का ही सिद्ध होता है।

निष्कर्ष :– इस प्रकार हम देखते हैं कि 'गीता' योगशास्त्र ही है। इसके सभी अध्यायों में योग की विस्तृत चर्चा मिलती है। इसमें योग साधक के लिए योगमार्गों का वर्णन किया गया है जिसके द्वारा परमलक्ष्य अर्थात् मोक्ष को प्राप्त किया जा सकता है। गीता के प्रत्येक अध्याय में योग की प्रतीति होती है। जिससे हम कह सकते हैं कि गीता योग से ही सम्बन्धित ग्रन्थ है।

सन्दर्भ सूची :–

1 श्रीमद्भगवद्गीता, गीताप्रेस गोरखपुर।

2 ईषादि नौ उपनिषद्, गीताप्रेस गोरखपुर।

3 पातञ्जल योगदर्षन, गीताप्रेस गोरखपुर।

4 डॉ. देवीसहाय पाण्डेय 'दीप', योगदर्षनम्, व्यासभाष्य समन्वितम्, चौखम्भा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, पृष्ठ सं. 1

5 www.timesnowhindi.com

6 www.scotbyzz.org

7 www.worldhistory.org